पुत्रत्व के मार्ग पर चलने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह तैयारी का समय है। यह आसान नहीं है। यह मार्ग लम्बा है, संकरा है और शरीर के लिए कठीन है। आदम के सन्तान को परमेश्वर के पुत्र के रुप में रुपान्तरण होने के लिए महान् सर्जन को गहरा और दुखद चीर फाड करना पडेगा। परन्तु हम धीरज पूर्वक सहें तो मिलने वाला पुरस्कार भी बहुत बडा है। उनके आगे रखे आनन्द के लिए यीशु ने कोई शर्म न मानकर क्रूस की मृत्यु को सह लिया। मिश्र की सम्पत्ति की तुलना में यीशु के कष्ट को मूसा ने बहुमूल्य जाना। पुत्रत्व के मार्ग पर चलते हुए हम भी वर्तमान के कष्ट की तुलना में हमारे सामने रखी गयी महिमा को देखें।

Website in English & Hindi: www.GrowthInGod.org.uk

मूसा
और
पुत्रत्व का मार्ग

शैतान से वाद विवाद किया था और हर्मोन पहाड पर हम मूसा को पुनरुत्थान के शरीर में यीशु के साथ बात चीत करते हुए देखते हैं ।

मूसा की मृत्यु से पहले १२० वर्ष की उम्र तक उनके शरीर का बल और आँखों की ज्याति क्षीण नहीं हुए थे । संघर्ष करके उन्हें अपना ग्‌रस बनाना या ऐसे ही छोड देना, ये दोनों ही काम मृत्यु के लिए कठीन था ।

मृत्यु वह अन्तिम शत्रु है जिसे नष्ट किया जाएगा । हनोक और एलिया दानों ने मृत्यु को पराजित कर सिधा परमेश्वर की उपस्थिती में पहुँच गए थे । परमेश्वर ने हमारे लिए क्या रखा है ? विजयी होने वाले क्या जितेंगे ? मैं नहीं जानता पर बाइबल में मैने पढा है, "यह नाशवान् अविनाशी और यह मरणशील जीवन धारण करेगा । मृत्यु को विजय निगल लेगा ।" आमीन ।

उपसंहार

जहाँ से मैंने आरम्भ किया था वहीं अन्त करुँगा । संसार में जो कुछ उपलब्ध है उससे भी अच्छी चिजें संसार में आवश्यक हैं । इन शब्दों को लिखते समय आफ्रिका और एशिया के देशों में करोडौ व्यक्ति गरीबी और भुख से सताए गए हें । लाखौं व्यक्ति युद्ध के कारण अपना देश छोड शरणार्थी शिवीर में रह रहे हैं । धनी देश के लोग शारीरिक कष्ट के बदले आत्मिकी कष्ट झेल रहे हें । पारीवारिक एकता नष्ट हो गया है और बहुत से व्यक्ति मानसिक चिन्ता से ग्रसित हैं । मनुष्य के पास जब अपनी आवश्यकता पुरा करने के लिए पहले से कहीं ज्यादा स्रोत साधन उपलब्ध हैं, ऐसे समय में ये सब हो रहा है ।

हमारे सामने जो अवस्था है वह विश्वव्यापी रुप में मानव जाति में व्याप्त कष्ट है । पौलुस ने इस अवस्था का वर्णन रोमी ८: १९ –२३ में किया है । परमेश्वर के पुत्र गण जो अभी तैयार किए जा रहे हैं, उनके प्रकटीकरण के लिए सारी सृष्टि प्रसव पिडा से कराह रही है और प्रतिक्षा कर रही है । मरुभूमि में मूसा की तैयारी के समय भी इस्राएली लोग अपनी पिडा में इसी प्रकार कराह रहे थे । परमेश्वर के द्वारा निर्धारित समय में मूसा ने आकर उन्हें मिश्र देश से बाहर निकालकर स्वतंत्र कर दिया ।

मानवीय व्यवस्था, प्रजातन्त्र हो या अधिनायकवाद, कभी भी संसार की समस्या समाधान नही कर सकता । सिर्फ ईश्वरीय राज्य व्यवस्था ही न्याय, शान्ती और समृद्धि ला सकता है । अभी परमेश्वर द्वारा तैयार हो रहे अपने पुत्रों के द्वारा वह शासन करेंगे । यीशु उनका नमूना ओर शिर हैं । यीशु के शरीर के रुप में उनके प्रकट होने का समय पास आ रहा है ।

उत्तराधिकार

पुराने नियम का इतिहास क्रमबद्ध नहीं है । परमेश्वर के द्वारा चुने गए महान् व्यक्ति जैसेः अब्राहम, युसुफ और दाउद के साथ साथ आशिष भी आया लेकिन इन व्यक्तियों के अवसान के साथ ही आशिष भी समाप्त हो गया । मृत्यु के साथ ही इनके काम का भी अन्त हो जाता था । मण्डली का इतिहास भी ऐसा ही है ।

मूसा और एलिया, दो महत्वपूर्ण अपवाद हैं । मूसा ने पहले ७० प्रचीनों के शिर पर हाथ रखा और परमेश्वर का आत्मा उनपर उतरा । फिर उसने यहोशू के शिर पर हाथ रखा । यहोशू मूसा का उत्तराधिकारी बनकर उस काम को पूरा किया ।

इसी प्रकार अग्निमय रथ में स्वर्ग जाते समय एलिया का चादर एलिशा के उपर गिरा । एलिया का आत्मा एलिशा के उपर आया, यह बात सब ने जाना क्योंकि एलिया के द्वारा किए गए आश्चर्य कर्मो से दो गुने आश्चर्य कर्म एलिशा ने किये ।

ऐसा होने के बावजूद भी मूसा के अन्तिम शब्द उत्साह जनक नहीं थे । "क्योंकि मैं जानता हूँ कि मेरी मृत्यु के पश्चात् तुम भ्रष्ट आचरण करोगे, तथा जिस मार्ग पर चलने की मैंने आज्ञा दी है उस से भटक जाओगे । तब पिछले दिनों में तुम पर बुराइयाँ आ पडेंगी क्योंकि तुम वह काम करोगे जो यहोवा की दृष्टि में बुरा है । तुम अपने हाथों के काम से उसका क्रोध भडकाओगे " (व्यवस्था ३१ :२९)।

इसके विपरीत यीशु ने कहा, "...मेरा जाना तुम्हारे लिए लाभदायक है, क्योंकि यदि मैं न जाऊँ तो वह सहायक तुम्हारे पास नहीं आएगा, परन्तु यदि मैं जाऊँ तो उसे तुम्हारे पास भेज दूँगा " (यूहन्ना १६: ७)।

पुनः उत्पादन करने की क्षमत बीज में होती है और बीज पुरुष में होता है । जब परमेश्वर के बेटे आत्मा के सामर्थ में जीते हैं तब और लोगों को दयनीय अवस्था में रहकर अपने पर निर्भर रहना नहीं सिखाते । परन्तु यीशु जैसे ही अपने उत्तराधिकारियों को अपना आत्मा देकर स्वयम् विदा लेते हैं ।

मूसा की मृत्यु

यीशु के समान ही मूसा का जन्म और मृत्यु दोनों ही विशेष प्रकार से हुआ । व्यवस्था की पुस्तक के अन्तिम अध्याय में लिखा है, "और यहावा ने बेत– पोर के सामने मोआब देश की तराई में उसे मिटी दी, परन्तु आज तक उसकी कब्र को कोई नहीं जानता ।" यहुदा के पत्र में लिखा है कि प्रधान स्वर्ग दूत मीकाइल ने मूसा के शव के विषय में

परिचय

पुराने नियम के व्यक्तियों में मूसा का विशेष महत्व है । मूसा के पहले और मूसा के बाद बहुत से महान व्यक्ति हुए, लेकिन एक हजार वर्षों तक उसके विषय में व्यवस्था में लिखे गए अन्तिम शब्द अक्षरसः सत्य प्रमाणित हुए, "उस समय से मूसा के तुल्य इस्राएल में ऐसा कोई नबी नहीं हुआ जिस से यहोवा आमने सामने बातें करता ।" इसके बाद उसकी अपनी ही भविष्यवाणी पूरी हुई, "तेरा परमेश्वर यहोवा तेरे लिए तेरे मध्य से, हाँ, तेरे ही जाति भाइयों में से मेरे समान एक नबी खडा करेगा । तुम लोग उसकी सुनना " (व्यव. १८: १५)।

उसकी महानता का रहस्य क्या था? यीशु के साथ उसकी समानता । पुराने नियम के व्यक्तियों में से मूसा के अलावा कोई भी यीशु जैसा नहीं हुआ ।

संसार में मूसा और यीशु जैसे व्यक्तियों की आवश्यकता है । यहाँ राजनितीज्ञ, धर्म गुरु अथवा वैज्ञानिकों की कमी नहीं है । ये बहुत हैं, लेकिन ये लोग यहाँ की समस्यायें समाधान नहीं कर सकते । परमेश्वर के पुत्रों के अलावा किसी के द्वारा यह सम्भव नहीं है । रोमियों की पत्री ८: १८ –२३ में पौलुस ने इस सत्यता को इस प्रकार वर्णन किया है : "क्योंकि सृष्टि बडी व्यग्रता से परमेश्वर के पुत्रों के प्रकट होने की उत्सुकता पूर्वक प्रतीक्षा कर रही है ......क्योंकि हम जानते हैं कि सम्पूर्ण सृष्टि मिलकर प्रसव–पीड़ा से अभी तक कराहती और तडपती है ।" पौलुस के इस पत्र को लिखते समय संसार की अवस्था यदि ऐसी थी तो वर्तमान अवस्था और भी बुरी होगई है ।

यीशु परमेश्वर के ज्येष्ठ पुत्र थे । उनके जीवन ने संसार में परमेश्वर को पूर्ण रुप से प्रकट किया था । जिन लोगों ने सिर्फ उनका नाम सुना है, वे भी उनके तीन वर्ष की सेवा, उनके जीवन, मृत्यु और पुनरुत्थान से आज भी प्रभावित होते हैं । परन्तु उनका जीवन सिर्फ एक बार के लिए, दुबारा फिर कभी नहीं घटित होने वाली एक मात्र घटना हो, ऐसी परमेश्वर की इच्छा नहीं थी । इसके विपरीत, परमेश्वर के लिए वे पहिलौठा फल थे । उनके बाद आने वालों के लिए वे दिशा निर्देश करने वाले चिन्ह थे । सारे संसार के पापों के लिए परमेश्वर के पाप रहित मेमने के रुप में हुई उनकी मृत्यु निश्चय ही पूर्ण और एक मात्र उपाय थी । पवित्र आत्मा के सामर्थ में व्यतीत किए गए उनके जीवन का उद्देश्य एकाधिकार नहीं था परन्तु उनके जैसे ही बहुत सारे हो सकें, ऐसा था ।

इस जीवन का उदाहरण हम मूसा के जीवन में देखते हैं । पुराने नियम के व्यक्तियों में से सिर्फ मूसा के जीवन और प्रभु यीशु के जीवन में अत्यधिक समानता थी ।

जैसे जैसे परमेश्वर के पुत्रों के प्रकट होने का विशेष समये पास आता जा रहा है, यदि हम पुत्रत्व की राह में बढ रहे हैं तो हमारे अपने अनुभव के समान ही मूसा के जीवन में भी बहुत सी बातें देखने को मिलेंगी ।

इस अध्ययन में मैने मूसा के जीवन की कुछ घटनाओं का यीशु के जीवन की ऐसी ही घटनाओं या कुछ और घटनाओं के साथ तुलना किया है । जैसे जैसे इस क्रम में हम आगे बढते जायेंगे, इन बातों का अर्थ समझते जायेंगे और हमारे अपने जीवन में परमेश्वर के द्वारा किये जा रहे कामों का महत्व भी स्पष्ट होता जाएगा ।

मूसा का जन्म

धर्मशास्त्र में बहुत सारे अलौकिक जन्मों का उल्लेख है । यीशु के जैसे ही इसहाक, शिमशोन, और बप्तिस्मा देने वाले यूहन्ना, इन सभी के जन्म के विषय में स्वर्गदूतों के द्वारा घोषणा किया गया था । परन्तु मूसा और यीशु के जन्म में दूसरे ही प्रकार की समानता थी । दोनों के जन्म के समय में एक हजार पाँच सय वर्ष का अन्तर होने के बावजूद भी जो दुखद घटनायें घटीं, वे दोनों को एक दूसरे के समान बनाती हैं । दोनों के जन्म के समय दुष्ट राजाओं ने अपना अपना राज सिंहासन बचाने के लिए असंख्य बच्चों की हत्या करने का आदेश दिया था । फिरौन ने आज्ञा दिया था कि हरेक नवजात हिब्रू बालक की हत्या कर दी जाय तथा हेरोद ने हुक्म दिया था कि दो वर्ष से छोटे सभी बच्चों को मार दिया जाय ।

प्रकाशितवाक्य १२:४ में एक ऐसी ही घटना का वर्णन किया गया है । "वह अजगर उस स्त्री के समक्ष खडा हो गया जो बच्चे को जन्म देने वाली थी, कि जब बच्चे का जन्म हो तो वह उसको खा जाय ।" इस्राएल के इतिहास में इसी प्रकार की दो अन्य घटनायें हम देखते हैं । लाल समुद्र पार करने के बाद इस देश के अस्तित्व में आने के थोडे ही दिनों के अन्दर यदि परमेश्वर ने इस देश की रक्षा नहीं की होती तो असंख्य अमालेकी मिलकर इसे नष्ट कर देते । इसके तीन हजार पाँच सय वर्षो के बाद इस्राएल देश के पुनर्जन्म होने पर फिर से संयुक्त अरब सेना ने आक्रमण किया परन्तु आश्चर्यजनक रुप से यह देश सुरक्षित रहा ।

इन पाँचों का जन्म, जैसेः मूसा, यीशु, प्रकाशितवाक्य में उल्लेखित बालक, इस्राएल का जन्म और पुनर्जन्म– इन सब से हमें एक शिक्षा मिलती है । जन्म – विशेष कर एक बच्चे का जन्म – का शैतान विरोध करता है । प्रत्येक घटना में उसका क्रोध और घृणा स्पष्ट दिखता है, हर बार परमेश्वर ने हस्तक्षेप किया है और बच्चे को सुरक्षित रखा है ।

यीशु के कष्टों के विषय में विचार करते समय स्वाभाविक रुप से हम उनके जीवन के अन्तिम क्षणों को विचार करते हैं । जब हम उनके साथ दुख उठाने की बात करते हैं तो साम्यवादी देश या दूसरे देशों में प्रभु यीशु के कारण जेल गये या सतावट में पडे विश्वासी भाई बहनों को याद करते हैं । इस तरह का दृष्टिकोण ठीक भी है और धर्मशास्त्र में लिखा है, "यहोवा के भक्तों की मृत्यु उसकी दृष्टि में अनमोल है " (भजन ११६: १५)।

लेकिन उनके कष्ट का गहरा पक्ष भी है । शारीरिक कष्ट, जैसा हम समझते हैं, उनके जीवन के अन्तिम २४ घण्टे में ही सिमीत था । आत्मिक कष्ट इस पृथ्वी पर व्यतीत किए गए ३३ वर्षे तक वे सहते रहे थे । "वह अपनों के पास आया और उसके अपनों ने उसे ग्रहण नहीं किया " (यूहन्ना १: ११)। "इसलिए उस पर ध्यान करो जिसने पापियों का अपने विरोध में इतना विद्रोह सह लिया ..." (इब्रानि १२: ३)। मूसा ने भी, अन्य जाति से नहीं पर परमेश्वर के लोगों के विरोध के कारण इसी तरह का कष्ट सहा था । पुत्रत्व के लिए बुलाए गए प्रत्येक व्यक्ति को इसी मार्ग पर चलना पडेगा ।

दूसरी बात, सिर्फ परमेश्वर के द्वारा चुने गए लोग ही यीशु के साथ राज्य करेंगे । यीशु ने यह बात स्पष्ट कही थी, "परन्तु अपने दाहिने और बायें बैठाना मेरा काम नहीं, यह उन्हीं के लिए है जिनके लिए तैयार किया गया है ।" लोग स्वाभाविक रुप से अधिक उत्पादन करना चाहते हैं । मसीन से एक ही तरह के सैकडों और हजारों वस्त्र उत्पादन होते हैं । परन्तु परमेश्वर विभीन्न रुपों में सृष्टि करते हैं । यहाँ तक कि बर्फ के दो टुकडे भी एक समान नहीं होते ।

धर्मशास्त्र यही शिक्षा देता है कि विभीन्न व्यक्तियों का बुलाहट भी अलग अलग है । समानता ढूढने वाले मानव स्वभाव के लिए इस सत्यता को स्वीकार करना आसान नहीं है । मालिक और दास, स्त्रीऔर पुरुष, माता पिता और बेटी बेटे, सब समान होना चाहिए । लेकिन मिट्टी के ढेर से अपनी मर्जी के अनुसार बर्तन गढने की सामर्थ रखने वाले कुम्हार जैसे ही परमेश्वर भी हैं । उनके द्वारा निश्चित किए गए बुलाहट में नम्रता के साथ बढना हमारा उतरदायित्व है ।

पुराने करार में परमेश्वर के काम करने का विशेष तरिका था । पृथ्वी पर रहने वाले अनगिनत प्राणियों में से उन्होंने एक विशेष जाति को चुना । उस इस्राएल जाति से लेवी नाम के गोत्र को उन्होंने विशेष उद्देश्य के लिए अलग किया । उनमें से उन्होंने कितनों को पुजाहारी और एक व्यक्ति को मुख्य पुजाहारी नियुक्त किया।

परमेश्वर की नयी व्यवस्था में समानता का नियम नहीं है पर जो बडे हैं उन्हें सबों की सेवा करना पडता है ।

यहाँ हम हारुन और मिरीयम जैसे नबी और मूसा जैसे परमेश्वर के जन के बीच भिन्नता स्पष्ट देखते हैं।

परमेश्वर के वचन अथवा परमेश्वर के मार्ग का अल्प ज्ञान पाने वालों के लिए अगमवाणी बोलने या अन्य आत्मिक वरदान उपयोग करने वाले व्यक्ति आत्मिक वीर पुरुष हो सकते हैं। परन्तु यह सत्य नहीं है। यह जानने के लिए हमें धर्मशास्त्र का विशेष ज्ञान या विश्वासी जीवन का लम्बा अनुभव आवश्यक नहीं है। शाऊल राजा ने आरम्भिक जीवन में नबियों के साथ अगमवाणी की थी। बाद में अनाज्ञाकारिता के कारण उसे त्याग दिया गया। उसके बाद दुष्टात्मा उसे सताने लगे। चंगाई या अन्य आश्चर्यकर्म की सेवकाई में आरम्भ में परमेश्वर के द्वारा उपयोग किए गए लोग बाद में बडे बडे पाप में गिर सकते हैं।

मूसा ने परमेश्वर को जिस रीति से जाना था, मिरीयम, हारुन अथवा अन्य नबियों ने नहीं जाना था। पोष्ट अफीस से जेसे किसी व्यक्ति को चिट्ठी मिलती है, ठीक उसी तरह इन्हें परमेश्वर का वचन या दर्शन मिलना सम्भव था। निश्चय ही इन व्यक्तियों के द्वारा परमेश्वर ने बातें कीं थीं परन्तु मूसा के साथ परमेश्वर, "...आमने सामने इस प्रकार बातें करता था, जिस प्रकार कोई मनुष्य अपने मित्र से बातें करता है।" (निर्गमन ३३: ११।

नये नियम में उल्लिखीत इसी तरह की एक घटना पर विचार करें। मरकुस के सुसमाचार के १०: ३७– ४० में याकुब और यूहन्ना ने यीशु से कहा, "तेरी महिमा में हम में से एक तेरे दाहिने और एक तेरे बाएं बैठे।" परन्तु यीशु ने उनसे कहा, "तुम नहीं जानते कि क्या मांग रहे हो। जो प्याला मैं पीने पर हूँ क्या तुम पी सकते हो ? या जो बप्तिस्मा मैं लेने पर हूँ, क्या तुम ले सकते हो?" और उन्होंने उस से कहा, "हम कर सकते हैं।" और यीशु ने उनसे कहा, "वह प्याला जो मैं पीने पर हूँ, तुम पीओगे, और जो बप्तिस्मा मैं लेने पर हूँ उसे भी तुम लोगे। परन्तु अपने दाहिने और बायें बैठाना मेरा काम नहीं, यह उन्हीं के लिए है जिनके लिए तैयार किया गया है।"

मिरीयम और हारुन जैसे ही याकुब और यूहन्ना ने भी उँचे पद की इच्छा की थी। लेकिन दो महत्वपूर्ण बातें उनके समझ में नहीं आईं।

पहली बात, प्रभु यीशु के साथ राज्य करने की इच्छा रखने वालों को पहले उनके साथ कष्ट भी सहना पडेगा। प्रकाश की पुस्तक के १४ अध्याय में सियोन पर्वत पर मेमने के साथ खडे १४४००० लोग वही हैं जो मेमने के पिछे चले हैं। उनके कष्ट और अनादर में भाग न लेकर उनके सिंहासन में भाग लेना सम्भव नहीं है।

यह बच्चा कौन है? मूसा इस बच्चा के पहले आने वाले और यीशु इसके शिर हैं। परमेश्वर के संतान, जिनका जन्म हो चुका है परन्तु अभी प्रकट नहीं हुए हैं, जो यीशु के साथ उनके सिंहासन में भाग लेने के लिए बुलाये गए हैं, और विभीन्न जातियों के उपर लोहे के राजदण्ड से शासन करेंगे, यही लोग इस बच्चे का शरीर हैं।

परमेश्वर की पुत्रियों के विषय में क्या कहेंगे? इस बालक के परिभाषा में क्या स्त्रीयाँ भी आती हैं? हम यह प्रश्न भी कर सकते हैं कि क्या मण्डली में जो मसीह की दुल्हन है, पुरुष भी सम्मिलीत हैं? क्या "वेश्याओं की माँ, वेश्या, उस महान् बाबुल" के अन्तर्गत पुरुष भी हैं? इन सब प्रश्नों का उत्तर मैं 'हाँ' में ही दूँगा। धर्मशास्त्र में पुरुष 'आत्मा' और स्त्री 'शरीर' को दर्शाते हैं। आत्मा के अनुसार चलने वाले स्त्री पुरुष दानों, आत्मिक रुप से पुरुष ही हैं। शरीर के अनुसार जीने वाले स्त्री या पुरुष दानों ही आत्मिक रुप से स्त्री हैं। इसलिए स्वाभाविक रुप से स्त्री या पुरुष जो भी आत्मिक रुप से जीवन व्यतीत करते हैं, वे ही परमेश्र के पुत्र हैं।

शत्रु इन पुत्रों के जन्म का विरोध करेगा लेकिन ये सुरक्षित रहेंगे क्योंकि परमेश्वर द्वारा जन्मा हुआ हर कोई संसार पर विजय पायेगा।

उनका नाम

अब हम मूसा के नाम के अर्थ पर विचार करेंगे। "उसने यह कहकर उसका नाम मूसा रखा कि मैंने उसे पानी में से निकाला था।" मूसा शब्द का अर्थ है 'निकालना'। इसमें हम दो बातें देखते हैं। पहली बात, वह स्वयं मिश्र देश के पानी से निकाले गए। मिश्र का पानी सांसारिक और शारीरिक बातें दर्शातीं हैं। मूसा को परमेश्वर ने निकालकर स्वर्गीय स्थान पर रखा। उसके बाद मूसा स्वयं दूसरों को निकालने योग्य बना। अत्यन्त कष्ट और विराध का सामना करते हुए मूसा ने इस्राएलियों को मिश्र देश से बाहर निकाला था।

यहाँ भी हम मूसा को उनके महान् उत्तराधिकारी यीशु के समान, फिर भी उनके विपरीत पाते हैं। यीशु उपर से (स्वर्ग से) आये थे, मूसा नीचे (पृथ्वी) से, हमारे सदृश ही थे। हमें शारीरिक पानी (अभिलाषा) से बाहर निकाला जाना आवश्यक है। यीशु के लिए यह आवश्यक नही था। सभी लोगों को बाहर निकालकर उपर ले जाने के लिए वह स्वयं उपर से आए थे। वह बालक जिसके विषय में हम पहले देख चुके हैं, उसे भी उपर परमेश्वर के सिंहासन पर ले जाया जायेगा।

नम्रता

जब मूसा राज दरबार में आराम और विलासिता पूर्ण जीवन कर रहे थे, उस समय परमेश्वर के लोग मिश्र के अधिकारियों के अधीन बडे ही कष्टपूर्ण जीवन जी रहे थे । जब मूसा चालीस वर्ष के हुए, उस समय उनके मन में इन लोगों के लिये कुछ अच्छा करने का विचार आया । वर्षों पहले देश भरमें प्रसिद्धी पाने वाले युसुफ नाम के व्यक्ति ने जेल से बाहर आने के बाद अपने लागों के साथ ही सम्पूर्ण मिश्र देश को अकाल से बचाया था । मूसा को युसुफ की याद आयी । मूसा की शिक्षा और राज दरबार में महत्वपूर्ण पद पर रहने के कारण इन लागों की सहायता युसुफ की तुलना में बहुत अच्छी तरह कर सकते थे ।

परन्तु परमेश्वर का समय अभी नहीं आया था । यीशु के समान ही युसुफ ने भी ३० वर्ष की उम्र में फिरौन के दरबार में आकर सेवा आरम्भ की । लेकिन मूसा १० वर्ष बडा होने के बावजूद भी इस अवस्था में आने के लिये ४० वर्ष और लग गया । अपनी जाति के लागों को सहायता करने का उनका प्रयास पूर्णतः विफल रहा । राज दरबार में रहकर भी वह कुछ नहीं कर सके । अधिकार का मूल स्रोत मूसा को ढूढना था ।

तत्कालीन अवस्था में मूसा को दो प्रकार के अधिकार प्राप्त थे । एक – स्थान का अधिकार, दूसरा – ज्ञान का अधिकार । वह राजकुमार थे और "मिश्री लोगों के सभी ज्ञान में निपुण" थे । बहुत से लोग आज भी सांसारिक अधिकार के आधार पर परमेश्वर की सेवा करना चाहते हैं । सामाजिक प्रतिष्ठा, उच्च अध्ययन तथा धर्मशास्त्र का ज्ञान पाकर परमेश्वर का वचन प्रचार करने से अच्छा और क्या हो सकता है? नाम और प्रतिष्ठा पाने वाले व्यक्तियों के प्रति जन साधारण आसानी से आकर्षित हो सकते हैं ।

मूसा के लिए सभी सांसारिक अधिकार छिन कर यीशु जैसे ही नम्रता के मार्ग पर चलना आवश्यक था ।

फिलीप्पी २ में हम ये अच्छे शब्द पाते हैं: "अपने में वही स्वभाव रखो जो मसीह यीशु में था, जिसने परमेश्वर के स्वरुप में होते हुए भी परमेश्वर के समान हाने को अपने अधिकार में रखने की वस्तु न समझा । उसने अपने आप को ऐसा शून्य कर दिया कि दास का स्वरुप धारण कर मनुष्य की समानता में हो गया । इस प्रकार मनुष्य के रुप में प्रकट होकर स्वयं को दीन किया और यहाँ तक आज्ञाकारी रहा कि मृत्यु वरन् क्रूस की मृत्यु भी सह ली ।"

हमारा सिमीत ज्ञान इस दीनता की गहराई को आसानी से नहीं समझ सकता है । परमेश्वर के लिए मनुष्य का स्वरुप धारण कर शरीर में कैद होना आसान नहीं था । यीशु ने अपने आप को और अधिक दीन किया । विशाल रोम शहर में उनका जन्म नहीं

रोमियों की पत्री, ८ अध्याय में पुत्रत्व के विषयमें चर्चा करते समय २१ पद में ऐसा लिखा है, "कि सृष्टि स्वयं भी विनाश् के दासत्व से मुक्त होकर परमेश्वर की सन्तानों की महिमा की स्वतन्त्रता प्राप्त करे ।" छुटकारा या स्वतन्त्रता पुत्रत्व का सार है ।

हमें देखने और अनुभव करने की आशा रखनी चाहिए कि परमेश्वर के आत्मा की शक्ति जो स्वतन्त्र करती है, हमारे जीवन में काम करे और हमें स्वतन्त्र करे । सारे सृष्टि के आने वाले छुटकारे के लिए जैसे वे हमसब को तैयार कर रहे हैं, जाने अन्जाने सभी तरह के जन्जीर और बन्धन टूटेंगे और नष्ट होंगे ।

विशेष बुलाहट

मूसा के जीवन की एक मनोरंजक और शिक्षापूर्ण घटना गिन्ती की पुस्तक के १२ वें अध्याय में लिखा है । मिरीयम और हारुन ने यह कहकर मूसा के प्रति अपना आक्रोस दिखाया था, "क्या यहोवा ने केवल मूसा ही के द्वारा बातें कीं हैं? क्या उसने हमारे द्वारा भी बातें नहीं कीं ?" उनकी बात ठीक थी । दोनों जन परमेश्वर की सेवा में लम्बे समय से लगे थे । फिरौन के दरबार में खडे होकर हारुन मूसा के प्रवक्ता होकर बात किया करते थे और बाद में मुख्य पूजाहारी पद पर नियुक्ति हुई थी । स्त्रियों के साथ गाती और नाचती हुइ उनके आगे आगे चलने के कारण मिरीयम को 'नबिया' कहा गया है (प्रस्थान १५: २०)। उनका कहना पूरी तरह सत्य है । परमेश्वर ने उनके द्वारा भी बातें कीं हैं । परन्तु सिर्फ इसी कारण वे दानों मूसा की बराबरी नहीं कर सकते थे ।

इसी अध्याय के ३ रे पद में लिखा है, "मूसा तो पृथ्वी भर के निवासियों में सबसे अधिक नम्र था ।" मूसा के जीवन में घटी कुछ घटनाओं ने उसे विनम्र बनाया था । ४० वर्ष की उम्र में उसमें घमण्ड था पर ८० वर्ष की उम्र तक पहुँचते पहुँचते वह पूरी तरह बदल कर दूसरा ही व्यक्ति बन गया । मिरीयम और हारुन ने भी अपने अपने जीवन में पवित्र आत्मा का काम अनुभव किया होगा लेकिन उनके व्यवहार से यही दिखता है कि उनके जीवन में परमेश्वर का गहरा काम नहीं हो सका था ।

इसके बाद परमेश्वर ने तीनों को मिलाप वाले तम्बू में बुलाया और उनसे कहा, "मेरी बातें सुनो; यदि तुम में से कोई नबी हो तो मैं यहोवा अपने आप को उस पर दर्शन के द्वारा प्रकट किया करता हूँ; मैं उस से स्वप्न में बात करता हूँ । परन्तु मेरे दास मूसा के साथ ऐसा नहीं है । वह तो मेरे पूरे घराने में विश्वासयोग्य है । मैं उससे आमने – सामने, प्रत्यक्ष रुप में बातें करता हूँ; गुप्त रुप से नहीं । वह यहोवा का रुप भी निह।रने पाता है ।"

एक यहूदी के रुप में धर्मशास्त्र का ज्ञाता और मण्डली की सभी रीतियों से अनजान व्यक्ति होता। ऐसी अवस्था में यीशु की शिक्षाओं का मेरे लिए क्या अर्थ होता? मैं अपनी प्रतिक्रिया कैसे देता ?

प्रभु यीशु की सेवकाइ के प्रभाव का मूल्यांकन करते हुए अपने सुसमाचार के अन्त में यूहन्ना का निष्कर्ष है, "और भी बहुत काम हैं जो यीशु ने किए। यदि उन्हें एक एक करके लिखा जाता, तो मैं सोचता हूँ कि जो पुस्तकें लिखी जातीं वे संसार में भी न समातीं।"

पवित्र आत्मा की अगुवाइ का ज्ञान नही होने वाले लोग सदा दूसरों की नकल करते हैं। दूसरों का काम देखकर ये लोग भी वैसा ही करने का प्रयास करते हैं। सिर्फ औरों से सिखी हुई बातें ही ये दूसरों को सिखा सकते हैं। रोमी ८: १४ में पौलुस ने लिखा है, "...वे सब जो परमेश्वर के आत्मा के द्वारा चलाए जाते हैं, वे परमेश्वर के संतान हैं।" परमेश्वर सृजनशील हैं, अतः पवित्र आत्मा भी सृजनशील हैं। परमेश्वर के आत्मा के द्वारा चलाए जाने वाले भी सृजनशील होंगे। उन सब की सृजनशीलता व्यक्तिगत गुणों पर निर्भर नहीं करता पर परमेश्वर के प्रेरणा पर आधारित होता है। स्वाभाविक रुप से सृजनशीलता मानव कल्पना पर आधारित होती है परन्तु पुत्रत्व की सृजनशीलता स्वयं परमेश्वर की सृजनशीलता होती है।

छुटकारे की सेवकाई

मूसा, यीशु और परमेश्वर के पुत्रों में व्याप्त एक और समानता के विषय में भी हम विचार करेंगे। ये सब छुटकारा देने के लिए भेजे गए हैं। मूसा ने दासता में रहे इस्राएलियों को छुटकारा दिलाया।

जैसा कि लुका के सुसमाचार में लिखा है, यीशु ने यशायाह नबी की पुस्तक से एक भाग पढकर अपनी सेवकाइ आरम्भ की, जहाँ उन्हीं के कामों का वर्णन किया गया है। उस भाग में लिखा है, "बन्दियों को छुटकारे का घोषणा" और "दलितों को छुडाने का।" यूहन्ना रचित सुसमाचार के ८:३२ में उन्होंने कहा, "और तुम सत्य को जानोगे और सत्य तुमको स्वतन्त्र करेगा।" और इसके चार पदों के बाद, "...यदि पुत्र तुम्हें स्वतन्त्र करेगा तो तुम सचमुच स्वतन्त्र हो जाओगे।" गलाती ५ में पौलुस ने लिखा है, "मसीह ने स्वतन्त्रता के लिए हमें स्वतन्त्र किया है, इसलिए दृढ रहो और दासत्व के जुए में फिर न जुतो।"

हुआ; यहाँ तक कि यरुशलेम में भी नहीं होकर छोटे से शहर बेतेलहेम में हुआ; राज दरबार अथवा आलिशान इमारत में न होकर एक चरनी में हुआ। एथेन्स जैसे शिक्षा के लिए विश्व प्रसिद्ध शहर में उनका पालन पोषण नहीं हुआ परन्तु नासरत जैसे छोटे शहर में वे पले बढे। उन्हें कोई विशेष शिक्षा नहीं मिली, न हीं काई विशेष काम मिला। तीन वर्ष के छोटे समय में घुमक्कड प्रचारक के रुप में सेवा करने से पहले अपने प्रौढावस्था का तीन चौथाइ समय उन्हों ने बढई का काम किया। उनके चेले यरुशलेम के शिक्षीत युवा समाज नहीं पर गलील के साधारण लोग थे। संसार की दृष्टि में अपराधी के रुप में उनकी मृत्यु हुई और वे असफल रहे। परमेश्वर के पुत्र के लिए यह कैसा मार्ग !

पुराने नियम में और सब की तुलना में सिर्फ मूसा ही ऐसे मार्ग पर चले हैं। कष्ट में जी रहे अपने भाइयों के लिए उन्हों ने राजदरबार का सब सुख विलाश त्याग दिया। जब एक हिब्रू को एक मिश्री पीट रहा था तो मूसा ने मिश्री की हत्या कर दी। अधिकांश व्यक्ति इसी तरह शारीरिक शक्ति में परमेश्वर की सेवा करने का प्रयास करते हैं। लेकिन मूसा के लिए इसका फल अच्छा नहीं हुआ। मूसा को इस घटना के बाद भाग कर मिद्यान देश में जाना पडा था। वहाँ उन्हे सिर्फ चरवाहे का काम मिल सका जो उनकी शिक्षा के लिए 'छोटा' काम था। उत्पत्ति ४६: ३४ के अनुसार "मिश्री लोग सब चरवाहों को तुच्छ मानते थे"।

ह्मारे मन में चरवाहे की अच्छी छवि होती है। यह तो यीशु का एक नाम भी है। हमारी कल्पना में छोटे छोटे मेमने धुप में हरी घास पर धुमा चौकडी मचा रहे होते हैं। तश्वीरों में प्रायः ऐसा ही दिखाया जाता है। लेकिन बहुत से देशों में जो वर्तमान अवस्था है, वैसे ही मिश्र वासियों के लिए चरवाहा एक गन्दा, संस्कारहीन, अशिक्षीत और घुमक्कड व्यक्ति होता है। मूसा चरवाहा बन गया था।

कोई भी पेशा तुच्छ नहीं होता लेकिन भारत में बहुत सी जातियाँ अछुत मानी जातीं हैं। इसके साथ ही नेपा ल की दमई और पोडे जैसी जातियाँ हैं जो सबसे निची मानी जातीं हैं। ब्राम्हण सबसे उँची जाति है। मूसा ने अपनी उँची जाति त्याग कर अछुत अवस्था को स्वीकार किया था।

सिर्फ इतना ही नहीं। हम पढते हैं, "मूसा अपने ससुर यित्रो की भेंड बकरीयाँ चराता था।" उसकी अपनी नहीं, अपने पिता की भेंड बकरीयाँ भी नही, परन्तु उसकी पत्नी के पिता की ! और वह मिश्र के राजकुमार थे !!

अपने पुत्र का नाम गेर्शोम – 'विदेश में प्रवासी' रखते समय उन्हों ने अपने मन की वेदना व्यक्त की थी। युसुफ ने भी अपने प्रवास के समय बडे साहस के साथ अपने जेष्ठ पुत्र का नाम मनश्शे रखा था जिसका अर्थ है 'भुला देना'। उसने कहा, "परमेश्वर ने मेरा

कष्ट और मेरे पूर्वजों को भुलाने में सहायता की है ।" इसी प्रकार दूसरे बेटे का नाम एप्रैम – 'फलवन्त' रखकर उसने कहा "मेरे कष्ट के देश में परमेश्वर ने मुझे फलवन्त किया है ।"

युसुफ ने अपने प्रवास में कल्पनातीत उन्नति किया था । इसके विपरीत मूसा के लिए कम से कम वर्तमान में सिर्फ अवनति ही था । भविष्य में मूसा युसुफ से भी उच्च स्थान प्राप्त करने वाला था । लेकिन इसके पहले उसे यीशु जैसे ही कष्ट के मार्ग पर चलना आवश्यक था और गेर्शोम –प्रवासी – होना जरुरी था ।

४० वर्षों तक, जबतक महान् व्यक्ति बनने की सभी आशाएँ नष्ट नहीं होगईं, मूसा को नम्रता पूर्ण जीवन व्यतीत करना पडा । यह मार्ग कष्टप्रद होते हुए भी फल रहित नहीं था । बादमें हम पढते हैं, "मूसा तो पृथ्वी भर के निवासियों में सब से अधिक नम्र था " (गिनती १२: ३) । युवावस्था में मूसा नम्र नहीं थे । स्वाभाविक रुप से इस अवस्था में कोई भी नम्र नहीं होता, खासकर राजदरबार में पालन पोषण किए गए व्यक्तियों में तो नम्रता होती ही नहीं । गरीब लोग प्रायः नम्र होते हैं । परमेश्वर ने मूसा के जीवन से अभिमान हटाकर उनके हृदय में यीशु के समान अच्छे चरित्र का निर्माण किया ।

अधिकांश व्यक्ति पुत्रत्व के अधिकार और इससे होने वाले लाभ के प्रति आकर्षित होते हैं लेकिन पहले नम्रता के मार्ग पर चलना आवश्यक है, यह पता नहीं होता । यदि हम यीशु के साथ उसके कष्टों में सहभागी होते हैं तभी अन्त में उसके साथ राज्य भी करेंगे । पुत्रत्व अपने अहम् को सन्तुष्ट करने का उपाय नहीं, पर अहम् की मृत्यु है । पहले पुराने मनुष्यत्व को खृष्ट के साथ क्रुस पर मरना आवश्यक है।

सृजनशील सेवकाई

हमने मूसा की तैयारी के विषय में विचार किया । अब हम उनकी सेवकाई के विषय में विचार करेंगे ।

मूसा आत्मिक रुप में अग्रणी थे । औरों के द्वारा रखी गयी नींव पर मूसा ने निर्माण नहीं किया । परमेश्वर ने मूसा को जो काम करने को दिया था, वह काम किसी और ने पहले कभी नहीं किया था । यह काम एकदम नया और बहुत बडा था ।

यीशु के विषय में, "जो परमेश्वर और सब मनुष्यों की दृष्टि में कार्य और वचन में सामर्थी नबी था" (लुका २४: १९) ऐसा लिखा है । मूसा भी ऐसा ही व्यक्ति थे । मिश्र में उनकी लाठी जमीन पर डालने से जो विपत्तियाँ आयीं थीं उन्हें सबने अपनी आँखों से देखा था । विपत्तियाँ प्रभावी हुईं थीं और सारे मिश्रवासी मूसा के काम को देखकर भयभीत हुए थे ।

उनकी बातें शीघ्र प्रभाव डालने वाली नहीं होने पर भी भविष्य के लिए अति महत्वपूर्ण थीं । परमेश्वर ने अपने विषय में प्रकाश देने के लिए पहले जिस जाति अर्थात् इस्राएल जाति को चुना था, मूसा ने उस जाति की नींव डाली । उसके बाद परमेश्वर ने मूसा के द्वारा जो बातें बोलीं, वे आज भी संसार के पचास प्रतिशत लागों के लिए बुनियादी नैतिक नियम बनीं हैं ।

मूसा के जीवन और सेवकाई का महत्व एवं इसका प्रभाव पुरी तरह समझ पाना हमारे लिए बहुत कठीन है । जैसा कि पहले भी उल्लेख किया गया है, व्यवस्था की पुस्तक में लिखा है, "उस समय से इस्राएलियों में मूसा जैसा कोई भी नबी उत्पन्न नहीं हुआ, जिससे परमेश्वर घनिष्ट थे ।" मूसा ने स्वयं भी कहा है, "तेरा परमेश्वर यहोवा तेरे लिए तेरे मध्य से, हाँ, तेरे ही जाति भाइयों में से मेरे समान एक नबी खडा करेगा । तुम लोग उसकी सुनना ।" (व्यवस्था १८: १५) यीशु के पहले आने वाले नबियों में मूसा की तुलना किसी के साथ भी नहीं की जा सकती ।

पुराने नियम में मूसा के बाद आने वाले सन्त लोग सिर्फ उसके पिछे चलने वाले हुए । एलिया के जीवन में यह बात स्पष्ट दिखती है । एलिया परमेश्वर के महान् सेवक होने के बावजूद भी बुनियादी रुप से वे एक पुनरुथापक थे । उनकी सेवकाई का लक्ष्य लोगों को मूसा की व्यवस्था में लौटाना था । सब लोग मूसा द्वारा दिए गये नियम पालन न कर अन्य देवी दवताओं की पुजा करने लगे थे । एलिया ने इन्हें अपने परमेश्वर यहोवा के पास लौट आने की चुनौती दी थी । बाल देवता के नबियों को मृत्यु दण्ड देकर एलिया ने मूसा की व्यवस्था में उल्लेखित आज्ञाओं का ही पालन किया था ।

वास्तव में मूसा की व्यवस्था पालन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा ही करना चाहिए था । यशायाह से लेकर मलाकी तक सभी नबियों ने इस्राएलियों को मूसा की व्यवस्था पालन करने की सिख दी है । मलाकी की पुस्तक के अन्त में लिखा है, "मेरे दास मूसा की व्यवस्था को स्मरण रखो .....।"

प्रभु यीशु की शिक्षा और उनके द्वारा किए गए आश्चर्य कर्म, सब नयीऔर क्रान्तिकारी थे । उनको गिरफ्तार करने वाले व्यक्तियों का कहना था, "इस व्यक्ति जैसी शिक्षा किसी ने भी कभी नहीं दी ।" उनकी बातें और उनका काम उनके पिछे चलने वालों को सदा आश्चर्यचकित कर देते थे । वे अब क्या करेंगे अथवा क्या बोलेंगे, चेले कभी समझ नहीं पाए । यीशु पूरी तरह सृजनशील थे ।

उन्होंने लोगोंको मूसा की व्यवस्था की ओर नहीं लौटाया । उनकी शिक्षा से ऐसा लगता था कि मूसा के द्वारा डाली गयी नींव ही नष्ट हो रही हो । परन्तु वे नष्ट करने नहीं पर पूर्ण करने आये थे । काश ! मैं २००० वर्ष पहले लौट सकता और इ. सं. ३० में